International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157, Impact Factor: RJIF 5.22
www.newresearchjournal.com/educational
Volume 1; Issue 2; March 2016; Page No. 59-62

कहानी 'टूटना' : एक यात्रा सतह से तह तक

डॉ. संतोष कौल काक

एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, बी. एम. रुइया गर्ल्स कॉलेज, मुम्बई, महाराष्ट्र, भारत।

प्रस्तावना

युग जैसे - जैसे बदलता है, वैसे - वैसे परिवेश में आए अंतर के साथ - साथ जीवनानुभूतियाँ भी परिवर्तित होती रहती हैं। जीवन की अनुभतियों में आये इस बदलाव की छाया धर्म - दर्शन, संस्कृति और साहित्य पर पड़ती है। साहित्य की एक सशक्त विधा है कहानी । कहानी मानवीय संवेदनाओ की ऐसी घटनात्मक अभिव्यक्ति का नाम है, जिसमें कहानीकार जीवन के किसी एक या अधिक तथ्य या मर्म की व्यंजना करता है। वह अपने भोगे - देखे क्षणों व अनुभतियों को वाणी देते हुए किसी विशिष्ट स्थिति अथवा लक्ष्य का उद्घाटन करता है।

पं. चंद्रधर शर्मा गुलेरी, जयशंकर प्रसाद, प्रेमचंद, सुदर्शन, जैनेंद्र, अज्ञेय, यशपाल, मोहन राकेश, कमलेश्वर, मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, मृदुला गर्ग, राजेन्द्र यादव आदि कहानीकारों ने समय - समय पर हिंदी कहानी को नयी दिशा, नयी गति, नया भाव - बोध, नयी संचेतना, नया शिल्प एवं नयी प्रभाव क्षमता देकर परिवर्तित सामाजिक सन्दर्भों की नई भावानुभूतियों की खोज की है।

आधुनिक कहानी अपने समय और समाज की भावधारा के जीते - जागते मनुष्य को उसके मन की संगति - विसंगतियों को, उसके जीने के तरीकों, उसमें आये परिवर्तनों, उसके सोचने - महसूस करने के तरीकों का विभिन्न स्तरों पर जायज़ा लेती है। राजेन्द्र यादव कहते हैं, "कहानी हमेशा ही किसी विशेष परिस्थिति में मनुष्य के मन और अनुभवों, यानी मनोविज्ञान को समझने – संप्रेषित करने का एक प्रयत्न है ; उसे बनाने – बदलनेवाले तत्वों और उसके द्वारा बनायी – बदली गयी स्थितियों के जीवन – खण्डों का अध्ययन है, इन बनती और बनाती स्थितियों को दिशा और काल में अर्थात विस्तार और गहराई की संश्लिष्टता में साथ पकड़ने का एक कलात्मक विधान।"[1]

सारा आकाश, उखड़े हुए लोग, शह और मात, एक इंच मुस्कान, कुलटा, अनदेखे अनजान पुल, मंत्र - विद्ध, एक था शैलेन्द्र आदि उपन्यासों, देवताओं की मूर्तियाँ, खेल - खिलौने, जहाँ लक्ष्मी कैद है, छोटे -छोटे ताजमहल, किनारे से किनारे तक, टूटना, ढोल, वहाँ तक पहुँचने की दौड़ आदि कहानी – संग्रहों, मुड़ - मुड़ के देखता हूँ (आत्मकथा) आदि के लेखक, प्रख्यात आलोचक - समीक्षक, अनुवादक, शलाका सम्मान एवं अन्य अनेक सम्मानों से पुरस्कृत, 'नई कहानी' को पहचान दिलाने और स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले, 'हंस' के लम्बे समय तक सफल संपादक रहे राजेंद्र यादव की कहानी 'टूटना' मानव – मन की मनोवैज्ञानिक पर्तों को उधेड़ती एक विशेष कहानी ही है।

राजेन्द्र यादव ने अपनी कहानियों के विषय के रूप में प्रायः नगर जीवन के मध्य वर्ग एवं निम्न मध्यवर्ग के पात्रों का चयन किया है। सामाजिक और आर्थिक विडम्बनाएँ मध्य वर्ग को रात - दिन चकनाचूर करती रहती हैं। यह वर्ग विविध विषमताओं, अतृप्तियों - अभावों, अंतःबाह्य विरोधों - तनावों, हीन ग्रंथियों, मानसिक कुंठाओं, परिवर्तित जीवन – मूल्यों से उपजे संघर्षो से भरपूर जिजीविषा के साथ लड़ता रहता है और अपने अस्तित्व को बचाने - बनाये रखने के प्रयास में जुटा रहता है। आधुनिक मानव में, स्त्री - पुरुष में, अपने अधिकारों एवं अस्तित्व के प्रति एक सजगता है। उसमें अत्याचारों से मुक्ति की कामना और संघर्ष की प्रवृत्ति भी है। रूढ़ियों, संबंधों एवं सत्ता के साथ उसका यह संघर्ष उसे विद्रोही भी बना रहा है।

राजेंद्र यादव इस आम व्यक्ति को उसकी समग्रता में देखने के आग्रही हैं और व्यक्ति को उसके सामाजिक परिवेश, मानसिक अंतर्द्वंद्वों तथा व्यावहारिक जीवन के तकाजों और अन्य आवश्यकताओं की एक संश्लिष्ट प्रक्रिया के रूप में पाना चाहते हैं। वे अपने पात्रों के अंतस में, मन की गहराइयों में प्रवेश करके उसके तनाव, अंतर्द्वंद्व, यातना - छटपटाहट, हीनता भाव, विषमता – विक्षोभ, डिप्रेशन, मानसिक उहापोह, कसमसाहट, भावुकता को पहचान लेते हैं और हाड़ – माँस के बने ज़िन्दा आदमियों की धड़कनों एवं असुरक्षितता को बखूबी चित्रित करते हैं। इनकी कहानियों में बदलते परिवेश, बनते बिखरते - टूटते सम्बन्धों के अनेक यथार्थ पहलुओं को अत्यंत ईमानदारी से निरूपित गया है।

उन्होंने कहा है "व्यक्ति - व्यक्ति के बीच जो कुछ तेजी से मर रहा है, बन और बदल रहा है और 'नया' जन्म ले रहा है, उस सबको खोजना समझना और व्यक्त करना नई कहानी की एक बहुत बड़ी विशेषता है, ...एक संबध के बीच जो सूक्ष्म परिवर्तन आ रहा है, जो हजारों अर्थ और ध्वनियाँ उभरने लगी हैं, मैंने उन्हीं पर सबसे अधिक बल दिया था और बताया था कि नयी कहानी ने संबंधों के इन शेड्स और नुआन्सेज को ईमानदारी से पकड़ने की कोशिश की है।"[2]

'टूटना' कहानी में लीना नामक युवती है। वह स्वतंत्र अस्तित्व की इच्छा रखने वाली एक सम्पन्न एवं आभिजात्य परिवार की आधुनिक भारतीय स्त्री है। वह अपनी ही युनिवर्सिटी में पढ़ने वाले एक निम्न मध्यम वर्गीय, आर्थिक रूप से असंपन्न, परन्तु मेहनती एवं कुशाग्र बुद्धि लड़के किशोर से प्रेम करने लगती है। अपने परिवार की अनिच्छा के बावजूद, लीना किशोर से कोर्ट मैरिज कर लेती है। विवाह के दो दिन बाद उसके पिता असिसटेंट इन्कमटेक्स कमिश्नर, मि. दीक्षित द्वारा नव – दम्पत्ति के सम्मान में दिए गए प्रीतिभोज में अभिजात्य - वर्ग की उपस्थिति में किशोर स्वयं को अकेला और सबसे बिल्कुल अलग – थलग महसूस करता है। चलते समय लीना के पिता स्टेशन पर दोनों को विदा करते समय अपनी बेटी को एक लिफाफे में कुछ रूपये देते हैं। है तो यह एक सामान्य ही बात, विदा के समय पिता का अपनी लाडली पुत्री को उपहार में कुछ देना, किन्तु किशोर को इसमें नज़र आता है लीना के पिता का गरीब दामाद पर अविश्वास। इस तरह कुछेक छोटी – सी बातें ही उसे बहुत बड़ी लगने लगती हैं और अब तक सामान्य सा जीवन जीनेवाले किशोर में हीनता - ग्रंथि को उपजाती हैं। आर्थिक असमानता का यह बोध दिनों - दिन इतना बढ़ता जाता है कि लीना का सहज व्यवहार, उसकी पसंद - नापसंद, उसकी वेश - भूषा, उसकी आदतें रोज – ब – रोज़ किशोर की कुंठाओ में अभिवृद्धि कर उसे ग़लतफहमी की ओर अग्रसर कर देती हैं। किशोर न तो लीना को संपन्न परिवारों की - सी सुख - सुविधाएँ दे पाता है, न उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर पाता है और न ही उसकी रूचियों में ढलकर उसकी अपेक्षाओं पर खरा उतर पाता है। जिस लीना ने कभी मायके में कोई काम नही किया था, यहाँ तक कि पानी का गिलास तक कभी नहीं भरा था, वही अब घर के सभी छोटे - बड़े काम स्वयं करते हुए गृहस्थी का दायितत्व निभाने की भरपूर कोशिश करती है, परन्तु अनेक प्रयासों के बाद भी वह किशोर को न समझा पाती है, न उसे ग्रंथियों से मुक्त कर पाती है। दोनों ही भीतर-- भीतर घुटते और उलझते रहते हैं। पर आखिर यह कब तक चल सकता था। लीना ने जिस प्रेम और अपनत्व की उम्मीद में सबकी इच्छा के विपरीत यह सम्बन्ध जोड़ा था, बहुत

प्रयास करने पर भी उसके स्थान पर प्राप्त होनेवाले रोज़ – रोज़ के अपमानजनक व्यवहार से वह क्षुब्ध हो जाती है। अंततः लीना किशोर से अपने वेदनादायी संबंध के कारण उसे छोड़कर चली जाती है। लीना की स्थिति को समझने, उससे दिल से प्रेम करने के बावजूद किशोर पर तो ससुर मि. दीक्षित का भूत सवार हो जाता है। उसी कारण आभिजात्य - वर्ग के प्रत्येक व्यक्ति से स्पर्धा के लिए तत्पर हो वह यह साबित करने में लग जाता है कि वह उनसे किसी प्रकार भी कम नहीं है। हीनता से उपजा यह भय उसकी स्थायी प्रकृति बन जाता है, जिससे वह मुक्त हो ही नहीं पाता। उसका यह भाव उसमें इतनी प्रतिद्वंद्विता जगाता है कि वह अभिजात्य और उच्च वर्ग की बराबरी करने की कोशिश में सतत अनेक प्रयास करता है। इसके लिए मेहनत करता हुआ अनेक नौकरियाँ बदल – बदल कर वह उन्नति की सीढ़ियाँ चढ़ते - चढ़ते अंततः बिजारिया इंडस्ट्रीज ग्रुप लिमिटेड का जनरल मैनेजर बन जाता है। इस पद पर पहुँचकर वह आर्थिक व सामाजिक रूप से सफल व सुदृढ़ भी हो जाता है। हीनता के भय से उसकी इस लड़ाई में वह मानो अपने अतीत को, अपनी पत्नी लीना को, उसकी स्मृतियों को दरकिनार कर देता है।

आठ वर्षों बाद किशोर को लीना का पत्र मिलता है "can't we forget the past - क्या हम अपने अतीत को भुला नहीं सकते।"[3] अपनी पत्नी लीना के द्वारा इतने वर्षों बाद लिखे इस पत्र को पाकर पहले तो किशोर के मन में लीना की इस पराजय से विजय, क्रूरता व प्रसन्नता का भाव जागता है पर बाद में लीना और अपने व्यवहार का, परस्पर संबंधो का मन ही मन विवेचन - विश्लेषण करने पर, उसे अपनी भूल और झूठे दंभ का एहसास होता है। वह लीना की दुःखपूर्ण स्थिति को महसूस करता है। वह यह भी समझ पाता है कि अपनी जिंदगी में वह जो भी व्यवहार या निर्णय करता रहा, उसका कारण लीना नहीं अपितु मि. दीक्षित ही थे। "वे खुद किशोर की जिंदगी में घुस आये थे, और अनचाहे मेहमान की तरह उसके अस्तित्व पर हावी हो गए थे। ...और ऐसे मौकों पर वह ठीक वही मुद्रा धारण करने की कोशिश करता जो उसके हिसाब से दीक्षित साहब ऐसे मौकों पर धारण कर सकते थे।"[4] इस प्रकार वह एक अनवरत अघोषित युद्ध लड़ रहा था। लीना तो निर्दोष होने के बावजूद उसके व्यवहार के कारण सर्वाधिक पीड़ा व यंत्रणा पाने को अभिशप्त हो गई थी। यह विचार लीना के प्रति उसके नज़रिये को बदल देता है। और तब पति व पिता के अहं का, उससे उपजी परिस्थितियों का शिकार बनी लीना की पराजय किशोर को एक गहरी कचोट एवं संवेदना भर देती है। "अक्सर उसे दया भी आती थी। लीना सब्जी काटती या झाड़ू लगाती, सफाई करती, कपड़े धोती, तो किशोर का मन एक अजीब करुणा से भर – भर आता।"[5]

इस तरह कहानी में भिन्न - भिन्न परिवेश से आये पति - पत्नी किशोर एवं लीना की पारिवारिक स्थितियों, विरोधी जीवन - दृष्टि से उत्पन्न स्थितियों के साथ – साथ, उनके बनते – बदलते, बिगड़ते – तड़कते - टूटते संबंधों का मार्मिक चित्रण हुआ है।

एक तरफ इस कहानी में आधुनिक स्त्री -पुरुष के दांपत्य – जीवन की विडम्बनाओं को दर्शाया गया है। भारतीय समाज पुरुष प्रधान है। अधिकांश पुरुष स्त्री की कोमल भावनाओं को समझने की बजाय समाज में अपनी स्थिति और नारी की विवशता का फायदा उठाते हुए अक्सर अपनी पत्नियों को अपनी मर्ज़ी के अनुसार बर्ताव करने के लिए बाध्य करने की कोशिश करते हैं। अपने अहं एवं कुंठाओं के कारण उसकी खुशियों, उसकी जिंदगी को ध्वस्त कर देते हैं। तभी तो लीना के चले जाने के बाद किशोर उसकी खबर तो रखता है, परन्तु न तो कभी उसे बुलाने – मनाने की कोशिश करता है और ना ही कभी उसके दुःख में उसका सहारा ही बनता है। "ऐसा नहीं है कि खुद किशोर के मन में हर दिन कम – से – कम एक बार यह बात न आती हो कि बहुत हुआ, अब वह लीना को लिख दे ; लेकिन हर रोज़ किसी ने उसका हाथ पकड़ लिया – या कहो, जिसने उसका हाथ पकड़ा हुआ था, उसकी शक्ति का वह प्रतिरोध करता रहा।"[6]

आदिम काल से अब तक नारी अपने प्रिय के लिए समर्पण कर, प्रेम के कोमल तंतु से जुड़ी रहना चाहती है। आधुनिक नारी अपने जीवन में पुरुष से केवल दैहिक संतुष्टि नहीं, अपितु भावनात्मक लगाव, बौद्धिक, वैचारिक एवं मानसिक सहयोग की अपेक्षा भी करती है। साथ ही यह भी चाहती है कि जिस तरह वह पति के साथ बाहर की जिम्मेदारियाँ निभाकर उसकी सहायता करती है, उसी तरह उसका पति भी उसकी तकलीफें समझकर घर के कार्यों में उसका सहयोग करे। किन्तु जब ऐसा नहीं होता तो रिश्तो में एक अजीब ठंडापन आने लगता है और वे एक घर में रहते हुए भी एक - दूसरे से कटकर बेगानों की तरह रहने लगते हैं। भावनाओं की उपेक्षा करनेवाले पति के द्वारा सतत बेवजह अपमानित होते रहने से स्त्री के भीतर झुंझलाहट, आक्रोश व पति के प्रति विकर्षण बढ़ता जाता है। पति से प्रेम के बावजूद, संघर्षो में डूबा उसका मन स्व-प्रतिष्ठा, स्वाभिमान, अहम से परिचालित होकर उसे दांपत्य - जीवन से विग्रह की ओर कदम बढ़ाने को विवश कर देता है। "न तुम अंधे हो, न बहरे। तुम सिर्फ इन्फिरियोरिटी काम्प्लेक्स के मारे हुए हो। इसलिए तुम्हें मेरी हर बात वह नहीं लगती, जो होती है। उसके पीछे और – और बातें दीखती हैं।"[7]

इस तरह आधुनिक स्त्री -पुरुष प्यार तो करते हैं एक – दूसरे से, परन्तु जब परिवेशगत परिस्थितियाँ उन पर दवाब डालती हैं, तो वे परस्पर रागात्मकता, समर्पण - भाव व श्रद्धा खो बैठेते हैं। वे एक दूसरे से ऊबते हैं, नफरत भी करते हैं और टूटते – बिखरते भी हैं। हाँ, कभी - कभार हालात के कारण वे समझौता करने को विवश भी हो जाते हैं। आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक, बौद्धिक आदि स्तरों पर एक दूसरे के व्यक्तित्व का परस्पर पूरक बनने की क्षमता जब पति - पत्नी में न हो, तो परस्पर आत्मीयता का इसी तरह ह्रास होने लगता है। आधुनिक जीवन के प्रेम - विवाह एवं स्त्री - पुरुष के दाम्पत्य - जीवन की इस विडंबना को, कटु यथार्थ को इस कहानी में अभिव्यक्त किया गया है।

दूसरी तरफ यह कहानी मानव मन के कुछ मनोवैज्ञानिक पहलू भी उजागर करती है। शैलेश मटियानी के अनुसार "मनुष्य की सबसे बड़ी यातना मुझे सिर्फ यही लगती है कि वह अधिकांशतः बाहरी दबावों के बीच अपने विवेक के अनुसार निर्णय न ले सकने की निरुपायता की दारुणता को जीने के लिए अभिशप्त हो जाता है।"[8] बात सही है। प्रत्येक मनुष्य में गौरव के साथ जीने की इच्छा होती है। परन्तु जब उसे अपनी इच्छाओं एवं विवेक को दबाकर दूसरे की इच्छाओं – धारणाओं के अनुसार आचरण करने को विवश किया जाता है तो उसका व्यक्तित्व छिन्न - भिन्न हो जाता है। उसकी प्रेरणाओं का दमन करके जब उन्हें चेतन एवं व्यावहारिक स्तर पर आने से रोक दिया जाता है तो, दमन की इसी मानसिक प्रकिया के फलस्वरूप ऐसी प्रबल मनोग्रंथियाँ बनती हैं जो जीवन पर व्यापक व गहरा प्रभाव डालती हैं। दूसरों की तुलना में स्वयं को तुच्छ समझने से व्यक्ति धीरे - धीरे आत्महीनता - ग्रंथि का शिकार हो जाता है।

इस आत्महीनता का कारण रूप - सौंदर्य, शारीरिक क्षमता, बौद्धिक अथवा शैक्षणिक क्षमता, सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक स्तर आदि में से कुछ भी हो सकता है। कई बार यह हीनता बोध वास्तविक नहीं अपित्तु काल्पनिक भी हो सकता है। ऐसा व्यक्ति तुच्छ भावों, आत्मविश्वास की कमी एवं असुरक्षा - भाव से भर उठता है। अपनी इस कमी की पूर्ति में वह जाने -अनजाने अहं का शिकार होकर आक्रामक व्यवहार एव शब्दों द्वारा सामनेवाले को परास्त करने का प्रयास करता है। प्रतिशोध की भावना से भरकर वह अपनी अप्रसनन्ता व हीनता - बोध का निमित्त बने व्यक्ति अथवा उसके प्रियजनों को, कभी - कभी औरो को भी दुःख एवं हानि पहुँचाने का, अपमानित करने का कार्य करता है। उसे अपनी मनोग्रंथि का आभास नहीं हो पाता है और न ही इस बात का, कि वह जाने - अनजाने उस व्यक्ति - सा व्यवहार करने लगा है जिससे वह नफरत करता है। अतः अपने आचरण की मूल - प्रेरणा अथवा रहस्य को प्रायः वह समझ नहीं पाता।

इस कहानी में भी उच्च आर्थिक, सामाजिक परिवेश से आयी लीना से किशोर प्रेम तो बहुत करता है परन्तु अपने को उसकी तुलना में पहले से ही वह छोटा महसूस करता है। लीना के पिता द्वारा दिए गए प्रीतिभोज के अवसर पर जब लीना चुपके से सबकी नज़र बचाकर किशोर की प्लेट का छुरी - काँटा सही तरीके से रखती है तो किशोर के अहं को चोट पहुँचती है। और वह उसी समय छुरी - कांटे को वापस यथास्थिति तो रखता ही है, बाद में भी लीना के द्वारा उसकी कई अजीब आदतों के बारे में समझाने पर भी वह यह जानकार भी कि लीना सही कह रही है, यह समझकर भी कि उसकी कुछ आदतें सचमुच अजीब हैं, वह सदैव जैसा है वैसा ही बने रहने का

प्रयास करता है। "उसका गट – गट पानी पीना, चप् - चप् खाना और 'हरि ओउम्' की लम्बी डकार के साथ तृप्ति का संतोष प्रकट करना – लीना को पसंद नहीं है – यह जानते हुए भी वह उसे चिढाने के लिए यही करते हुए खाता।"[9] सिर्फ इस वजह से कि वह आभिजात्य संस्कारों में पली अपनी पत्नी रीना की बात को मान लेगा तो छोटा हो जाएगा। उसकी यह आत्महीनता ग्रंथि दिन – ब - दिन उसपर इतनी हावी हो जाती है कि वह भाषा, खान - पान, रहन - सहन, खर्च आदि को लेकर सदैव लीना को नीचा दिखाने की कोशिश करता है। उस पर, उसके आभिजात्य वर्ग पर झूठे - सच्चे दोषारोपण करता है। लीना को बार -बार उसके आभिजात्य वर्ग एवं परिवार के विषय में कहकर वह अपमानित करने में सुख का अनुभव करने लगता है। इसी आत्महीनता ग्रंथि से उपजे व्यवहार के कारण वह स्वयं एवं लीना को तनावों से भरकर दांपत्य - सुख से भी वंचित कर देता है। वैवाहिक सम्बन्धों में तनाव से परेशान लीना द्वारा उसे छोड़ने से अपमानित अनुभव करनेवाला किशोर अपनी हीनता की क्षतिपूर्ति के लिए अपने जीवन का अधिकांश समय कठोर श्रम द्वारा अपनी आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति को ऊपर उठाने में लगा देता है। अपने मानसिक प्रतिद्वंदी मि. दीक्षित को तो वह कोई हानि नहीं पहुँचा पाता, पर उनकी बेटी लीना, अपने से अधीन कर्मचारी अथवा कम हैसियत वाले लोग जैसे कि जयंत या फिर नौकरी के अथवा छुट्टी के प्रार्थी लोगों का अपमान कर वह संतुष्ट हो जाता है। ऐसे अवसरों पर वह अक्सर याद करता और सोचता है कि उसने इन लोगों के साथ वैसा ही व्यवहार किया जो ऐसी परिस्थिति में मि. दीक्षित करते।

अक्सर आत्महीनता से ग्रस्त व्यक्ति शंकाएँ करता है और कई बार तो दिवा – स्वप्न भी देखता है। किशोर का एक सहकर्मी है मि. मेहता। किशोर से मित्रता के नाते वह कभी – कभी उनके घर आता है। लीना और मि. मेहता की पारिवारिक पृष्ठभूमि एक – सी होने के कारण उनमें अक्सर ऐसे विषयों पर बातचीत होती है, जिनमें दोनों की रूचि हो। एक बार मि. मेहता द्वारा लीना के लिए उपहार में लायी गयी साड़ी की लीना द्वारा की गयी तारीफ से किशोर को अपना अपमान सा लगता है। अपनी कुंठा के कारण किशोर लीना पर विश्वास करते हुए भी अपने अभिजात्य मित्र एवं सहकर्मी मि. मेहता को लेकर लीना के चरित्र पर झूठे लांछन लगाता है, उनके सामने भी लीना का अपमान कर वह आत्मतुष्ट होता है। मि. मेहता द्वारा लीना को दी गई रॉयल सिल्क की महँगी साड़ी पाकर लीना का चहकना उसके मन की गहराई में इतना हीनता - बोध भर देता है कि सामाजिक प्रतिष्ठा पाने के बाद वह जयंत की पत्नी माला को भी वैसी ही साड़ी देने का सपना देखकर मानो अपने साथ हुए व्यवहार का बदला ले लेने की आत्मतुष्टि से भर उठता है।

किशोर सदैव अपने ससुर मि. दीक्षित को पछाड़ने के, अपमानित करने के ख्वाब देखा करता है। रिटायर्ड ससुर को अपने अधीन नौकर बनाकर रखने के स्वप्न देखते हुए न जाने कैसे - कैसे असंभव दृश्यों की वह कल्पना कर लेता है। इसका सूक्ष्म व मार्मिक चित्रण यहाँ हुआ है। "वह मैनेजर हुआ, तो पहली बात उसके मन में उभरी - दीक्षित साहब अब तो कमिश्नर होकर रिटायर हो गए होंगे। ...सेठ से कहकर क्यों न उन्हें यहाँ बुलवा लिया जाय ? उसके नीचे काम करेंगे और चैम्बर में आने से पहले खट्खट करके कहा करेंगे, मे आई कम इन, सर ? वह बैठा – बैठा उनकी फाइल के कागजों पर दस्तखत करता रहेगा और वे अदब से एक ओर खड़े रहेंगे।"[10]

इस कहानी से आज के जीवन का जो एक और पक्ष उभरता है वह यह है कि आज कोई किसी से कम खुद को मानना नहीं चाहता। फलतः प्रतियोगिता की भावना के कारण उच्च पदों पर पहुँचने, धन कमाने की एक अंधी दौड़ और होड़ हमें चारों ओर दिखाई दे रही है। इसके लिए नैतिकता, जीवन - मूल्य, परिवार, सम्बन्ध सब ताक पर रख दिए गये हैं। आज प्रत्येक व्यक्ति इस भीषण संघर्ष में स्वयं को असुरक्षित असहाय और अकेला महसूस करता है, फिर भी वह आत्म केंद्रित होकर केवल अपनी सुरक्षा हेतु, अपनी बुद्धि का प्रयोग करते हुए परिवार एवं समाज से कटता, दूर होता जा रहा है।

इस तरह अपने अनुभूत जीवन सत्य को अभिव्यंजित करते हुए लेखक ने अपने में डूबते – उतराते, घुटन - पीड़ा में ही जीते, अकेलेपन - खोखलेपन की समस्याओं से ग्रस्त व्यक्तियों के चित्र उकेरे हैं। आज के व्यक्ति के भीतर - बाहर घना शोर है, ख़ामोशी है, घुटन और टूटन है, विषाद - संघर्ष और असंतोष है, भय है और असुरक्षा भी है। और ऐसे एक नहीं अनेक व्यक्ति हैं, परिवार हैं, अतः यह मात्र किसी एक व्यक्ति या एक परिवार की कहानी नहीं है। आधुनिक स्त्री -पुरुष के दांपत्य संबंधों का यह यथार्थ प्रस्तुत करते हुए लेखक ने बखूबी पुरुष के अंतर्मन की जटिल गुत्थियों, कुंठाओं को पकड़ने और उसे कहानी के माध्यम से सरलीकृत कर प्रस्तुत करने की कोशिश की है। भीतरी सत्य सघन होता है और उसे जानना व पकड़ना जटिल। फिर भी 'टूटना' में भीतरी सत्य का रेशा - रेशा, परत - दर - परत उधेड़ते - उघाड़ते हुए कुण्ठाओं, समस्याओं एवं उनके मनोवैज्ञानिक कारणों को उजागर करने का लेखक का निःसंदेह यह एक सफल, सजग एवं सार्थक प्रयास है।

इस तरह समस्याओं के वस्तुगत कारण को समझाने के लिए राजेन्द्र यादव ने इस कहानी में सामान्य से सामान्य तथ्य का पूर्णता से वर्णन किया है। यूँ यह कहानी सतह से शुरू होकर तह तक जाती है और मनुष्य के अन्तरंग को बहिर्गत करने का सफल प्रयास करती है। साथ ही इस बात पर प्रकाश डालती है कि परिवेशजन्य परिस्थितियाँ समझदार से समझदार व्यक्ति को किस हद तक सोचने, विचित्र व्यवहार करने को बाध्य कर देती हैं। मानसिक जगत की गूढ़ एवं आभ्यंतर मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाओं, संवेदनाओं को उभारने में लेखक सफल हुए हैं।

इस कहानी में लेखक ने प्रकृति -चित्र, स्थानगत विवरण, कालगत वैशिष्ट्य - जैसे प्राचीन परंपरागत भौतिक परिवेश के चित्रण की अपेक्षा मानसिक स्थितियों के सहारे मानसिक परिवेश का सहज चित्रण किया है। पात्रों की परिवेशगत दशा एवं मनःस्थिति के इन वर्णनों की वजह से उनकी मनोवैज्ञानिक अवस्था को समझना - ग्रहण करना तो आसान हो ही गया है साथ ही उनके व्यवहार, संस्कार एवं अंतर्बाह्य व्यक्तित्व का मूल्यांकन भी प्रभाशाली बन पड़ा है।

संवादों के प्रति यूँ राजेन्द्र यादव का विशेष आग्रह उनकी कहानियों में दिखाई नहीं देता। परन्तु इस कहानी में जितने संवाद हैं वे अधिकांशतः संक्षिप्त, सरल, अकृत्रिम, पात्रानुकूल एवं रोजमर्रा की अर्थात बोलचाल की भाषा में है। ये संवाद पात्रों की मानसिक उथल - पुथल, तनाव, क्षोभ, दवंद्व आदि मनःस्थितियों के द्योतक हैं। कहानी की कथावस्तु को आगे बढ़ाने एवं पात्रों के चरित्रोद्घाटन में भी कहानी के संवाद अहम भूमिका निभाते दीख पड़ते हैं। मनोवृत्तियों के चित्रण में प्रयुक्त स्वगत - कथन अत्यंत रोचक एवं सजीव हैं। कहीं - कहीं हास - परिहास एवं व्यग्य - विनोद के प्रयोग से वे चुस्त, चुटीले, रोचक व सम्प्रेषणीय बन गये हैं।

कहानी की भाषा सरल, सहज, स्वाभाविक, आडम्बरहीन एवं प्रवाहमय है। इसकी भाषा में तत्सम, तद्भव, देशज, उर्दू और अंग्रेजी आदि के शब्दों का प्रयोग किया गया है। - सिनेमाओं में, मैगजीनों में, आस – पास की दुनिया में, वह ध्यान से देखता – सुनता कि ऊँची पोस्ट और पोजीशन वाले लोग कैसे बोलते हैं, कैसे हँसते हैं, किस समय उनके चेहरे पर क्या भाव रहता है, कैसे खड़े होते हैं और काम तथा आराम के समय उनके क्या – क्या पोज़ रहते हैं। और जब उन्हें निर्व्याज सरलता से नकल कर लेता, तो सुनाता, "सुना साहब बहादुर, ये नए अफसरों के उठने – बैठने, बोलने – चालने के ढ़ंग हैं।"[11] इस तरह इस कहानी में प्रयुक्त भाषा अधिकांशतः रोजाना व्यवहार में आनेवाली भाषा है। मानसिक स्थितियों के चित्रण के दौरान मनोवैज्ञानिक पदावली (जैसे कॉन्फिडेंस, नर्वस, कौशल्य, पर्सनालिटी, अचेतन, आवेग, इंफिरियोरिटी कॉम्प्लेक्स आदि) का प्रयोग हुआ है। ध्वन्यात्मकता और पात्रानुकूलता भी इस कहानी की भाषा में दिखाई देती है। मुहावरे एवं आलंकारिकता भी इसकी भावानुरूप भाषा में कहीं – कहीं प्रयुक्त हुए हैं।

स्ट्रीम ऑफ़ कांशसनेस से प्रभावित आत्म संस्मरणात्मक कहानियाँ प्रायः अंत से आरंभ होकर पुनरावलोकन शैली में पीछे चलती है। इसके अतिरिक्त कहानी में आत्मकथात्मक, चित्रात्मक, व्यंग्यात्मक, नाटकीय, फ्लैशबैक, भावात्मक आदि शैलियों का मिश्रित प्रयोग हुआ है। भावात्मक शैली का उदहारण दृष्टव्य है – "अन्यमनस्क भाव से दरवाज़े के हैंडलवाली चाबी का सूराख टटोलता रहा ...फिर इंजन स्टार्ट करके देर तक यों ही बैठा बाहर देखता रहा ... अत्यंत तटस्थ, निर्वेद,

ऊँचाई पर खड़े होकर नीचे घाटी में पड़े घायल, पस्त सिपाही को देखकर मन में करुणा उमड़ आई थी। उसकी आँखें फिर सजल हो आयीं – दो दुर्द्धर्ष शक्तियों के बीच लीना, एक निरीह लड़की लीना – पिस गयी।"[12]

कहानी का शीर्षक संक्षिप्त है। आकर्षक है, औत्सुक्य जगानेवाला है। साथ ही वह केंद्रीय भाव पर, वर्ण्य विषय पर भी आधरित है - अर्थात आधुनिक शिक्षित दंपत्ति के रिश्तों के प्रतिपल टूटने की नियति को तो दर्शाता ही है, साथ ही मानसिक मनोग्रंथियों के बनने - टूटने की प्रकिया का द्योतक भी है। इस तरह सामाजिक यथार्थ की लाक्षणिकता से युक्त यह शीर्षक सार्थक, सोद्देश्य एवं मौलिक है।

सन्दर्भ सूची

1. एक दुनिया समानांतर, संपा, राजेन्द्र यादव, पृ सं. 29।
2. कहानी : स्वरुप और संवेदना, राजेन्द्र यादव, पृ सं. 58।
3. एक दुनिया समानांतर ('टूटना'), संपा, राजेन्द्र यादव, पृ सं. 300।
4. एक दुनिया समानांतर ('टूटना'), संपा, राजेन्द्र यादव, पृ सं. 320-321।
5. एक दुनिया सामानांतर ('टूटना'), संपा, राजेन्द्र यादव, पृ सं. 313।
6. एक दुनिया सामानांतर ('टूटना'), संपा, राजेन्द्र यादव, पृ सं. 305।
7. एक दुनिया सामानांतर ('टूटना'), संपा, राजेन्द्र यादव, पृ सं. 318।
8. एक दुनिया सामानांतर ('टूटना'), संपा, राजेन्द्र यादव, पृ सं. 300।
9. एक दुनिया सामानांतर ('टूटना'), संपा, राजेन्द्र यादव, पृ सं. 311।
10. एक दुनिया सामानांतर ('टूटना'), संपा, राजेन्द्र यादव, पृ सं. 320।
11. एक दुनिया सामानांतर ('टूटना'), संपा, राजेन्द्र यादव, पृ सं. 323।
12. एक दुनिया सामानांतर ('टूटना'), संपा, राजेन्द्र यादव, पृ सं. 324।